International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 13 Issue 12||December. 2024 || PP. 183-187

प्राचीन भारत एंव एशियाई देशों के बीच संबंध :– एक विश्लेषणात्मक अध्ययन।

डॉ0 नितिन नीरज

सहायक प्राध्यापक

(इतिहास विभाग)

डिग्री कॉलेज, जगन्नाथपुर

कोल्हान विश्वविद्यालय ,चाईबासा। (झारखण्ड)

सरांश

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है यह माना जाता है कि भारतीय संस्कृति यूनान,रोम, मिस्त्र सुमेर और चीन की संस्कृति के सामान ही प्रचान है। काई भारतीय विद्वान तो भारतीय संस्कृति को विश्व की सर्वाधिक प्राचीन संस्कृति मानते संस्कृति मानते हैं। प्राचीन संस्कृति मानते है। प्राचीन समय से भारत से विचारों ,दार्शन, संस्कृति तथा व्यक्तिओं की यात्रा सुदुर पूर्व के इन देशों मे होती रही थी । दक्षिण पूर्व एशियाई देशों की कला, स्थापत्य, संस्कृति परिदृश्य पर भारतीय छाप आज भी परिलाक्षित होती हैं।

भूमिका

प्रचीन काल से ही भारत विश्व के अन्य देशों से व्यापारिक स्तर पर संपर्क में रहा है जबकि भारत तीन और से समुद्र से घिरा है और इसके उत्तर में हिमालय पर्वत श्रेणी है। लेकिन ये विश्व के अन्य देशों से भारत के नजदीकी संबंध बनाने में कभी बाधक नहीं बने। भारतीय लोगों ने सुदुर देशों की यात्राएं की और वे जहां भी गए, वहां उन्होंने भारतीय संस्कृति की अमिट छाप छोड़ी । इसके साथ,ये सुदुर देशाों के विचार,प्रभाव, रीति– रिवाज और परंपराओं को ीाी साथ ले आये। तथापि इस संदर्भ मे सवसे वड़ी विलक्षणता यह थी कि इससे भारतीय संस्कृति और सभ्यता का प्रसार विश्व के विभिन्न में हुआ, विशेषरूप मध्यं एशिया, दक्षिणपूर्व एशिया,चीन जापान, कोरिया आदि में। इस प्रसार की सर्वाधिक विलक्षणता यहं है कि इस प्रचार को उद्देश्य किसी सामाज या व्यक्ति को जीतना या डराना नहीं बल्कि भारती की आध्यात्मिक तथा सांस्कृति मूल्यों को स्वच्छा से स्वीकार करवाना था ।

प्राचीन काल में भारतीय व्यापारी व्यापार के नए अवसरों की खोज में अनेक देशों में एग थे। वे पश्चिम में रोम तक और समुद्री मार्गों से होते हुए पूर्व में चीन तक पहुंचे थे। हमारे देश के व्यापरी सोने की खोज में प्रथम शताब्दी में इण्डोनेशिया और कम्बोडिया आदि देशों में गए। उनकी जावा, सुमात्रा तथा मलाया द्वीपों की यात्राओं के विशेष वर्णन मिलते हैं।यही कारण है कि इन क्षेत्रों को प्राचीन काल में 'सुवर्ण द्वीप' कहा गया था। सुवर्ण का अर्थ ' सोना ' और द्वीप मिलकर बना 'सोन का द्वीप ' । वास्तव मे व्यापरियों ने संस्कृति –दूत की भूमिका निभायी तथा बाहरी दुनिया के देशों के साथ व्यापारकि संबंध स्थाति किये। ईसा–पूर्व पहली शंताव्दी में व्यापारी उज्जैन, मथुरा,काशी, प्रयाग , पाटलीपुत्र आदि नगरों से और पूर्वी तक के मामल्लपुरम, ताम्रलिप्ति, कटक,पुरी, रामेश्वरम् तथा कावेरीत्तनम् से विदेश के लिए चलते थे। सम्राट अशोक के काल में कलिंग राज्य का श्रीलंका के साथ व्यापारिक संबंध था। जहां कहीं भी व्यापारी एगी वहीं उनके सांस्कृति संबंध स्थापति हो एग थे। इस प्रकार व्यापारियों ने सांस्कृति राजदूतों की भूमिका का निवांह किया और वाहरी दुनिया से व्यापारिक सम्वन्ध बनाए।

पूर्वी तक से समाने ही पश्चिमी तक पर भी उनके सास्कृति सांस्कृति स्थल वने। इसमें अंजन्ता, एलोरा,कार्ले कन्हेरी आदि का नाम विशेष रूप से लिया जाता है । इनमें से ज्यादातर केन्द्रों पर वौद्ध धार्मिक मठ हैं। सांस्कृतिक आदान–प्रदान में यहां के प्राचीन विश्वविद्यालायों की भूमिका सबसे ज्यादा म्हत्त्वपूर्ण रही है। प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेन–सांग ने भारत के उन सभी विश्वविद्यालयों कका विस्तार से वर्णन किया है जिनमें वह गए अथवा जहां रह कर इन्होने अध्ययन किया। इनमें से दो विश्वद्यिालयों का विशेष रूप से उल्लेख किया जा सकता है – पूर्व मे नालंदा ओर पश्चिम में वल्लभी। गंगा के पूर्वी तक पर एक अन्य विश्वविद्यालयों या – विक्रमशिला। तिब्बती विद्धान् तारानाथ ने इसका विस्तृत वर्णन किया है। बिहार में एक अन्य प्रसद्धि विश्वविद्यालय था ओदन्तपुरी । पालवंश के राजओं के संरक्षाण में इसकी प्रतिष्ठा बढ़ी ।इस विश्वविद्यालय से बहुत सारे बौद्ध भिक्षु तिब्बत में जाकर बस गए थें।

ईसा पूर्व दूसरी शतब्दी से भरत ने चीन, मध्य एशिया, पश्चिम एशिया और रोमन साम्राज्य के साथ व्यापारिक और सांस्कृतिक सम्बन्ध बनाए थे। ज्यों दक्षिाणी –पूर्वी एशिया के देशों की जानकारी होती गई तथा उनसे भारत के व्यापारिक , सांस्कृतिक और राजनीतिक संबंध बढ़ते गए । भारत और चीन के आपसी सम्पर्क दूसरी शताब्दी इसवी में आरम्भ हुए। बौद्ध धर्म के प्रसार के साथ चीन मं बहुत ही वड़े स्तर पर गुफाओं की खुदाई तथा मंदिरों और विहारों के निर्माण का कार्य आरम्भ है । इनमें , भारतीय प्रभाव काफी स्पष्ट रूप से से देखा जा सकता तक ' भारतीय हिन्दु पंडितों और बौद्धचायों का, प्रवेश हुआ और सुवर्ण द्वीप में पहले हिन्दु (शैव,शक्ति और वैष्णव) पीछे बौद्ध धर्मों का विस्तार हुआ । वाली मे ंतो बुद्ध को शिव का कनिष्ट आता ही कहा व समझा जाने लगा और जावा में शिव का –वुद्ध की एकस्थ उपासन भावसम्मत हुई, सुवर्णद्वीप कम्वुज के एक ही राज शिव को पूजाता और वुद्ध के विहार और स्तूप वनवाता था दक्षिण –पूर्ण एशिस में वाली ही अकेला देश है जहां आज भी हिन्दु धर्म जीवित है और उसकी सामाजिक व्यवस्था प्रचलित है। सम्पूर्ण सुवर्णद्वीप में भारतीय भाषा , साहित्य , कथाएं और अनुश्रुतियों परम्परा एवं कला का अभूतपूर्व प्रभाव पड़ा। स्थ्ल और समुद्र – मार्ग के द्वारा पश्चिमी एशिया से भारत का संपर्क प्राचीन काल से चला आ रहा है। समुद्रगुप्त के पास न केवल शक्तिशाली सेना था बल्कि सशक्त जलसेना भी थी। गंगा –पर प्रायद्वीप में तथा मलय के संग्रहालयों में ऐसे कुछ श्लिालेख मिले है जो गुप्तकाल में भारती नाविकों के क्रिया कलापों को प्रमाणित करते हैं। हर्षवर्धन के काल में भारत की यात्रा करने वालें ह्वेन–सांग ने भी उसय समय के भारत के विषय में विस्तारपूर्वक लिखा है। चोल शासकों ने एक मजबूत जलसेना बनाई थी और समुद्र पार के देशों पर आक्रमण भी किए थे । पुर्तगालियों के उल्लेखों से ज्ञात होता है कि कुछ भारतीय व्यापारी 50 जहाजों तक स्वामी थे। उनके आम बात थी। पश्चिम में विभिन्न स्थानों पर मिली हड़प्पा–सभ्यता से संबंधित वस्तुएं सिद्ध करती है कि ईसा पूर्व तीसरी सहरत्राब्दी में मैसोपोटामिया और मिस्त्र सभ्यताओं के साथ भारत के व्यापरिक और सांस्कृति संबंध थे। यही नहीं, प्राचीन यूनान,रोम और ,फारस के साथ हमारे देश के सांस्कृति धार्मिक और सामाजिक विचारों का खुब आदान – प्रदान हुआ। रोम साम्रज्य साथ व्यापार के फुलने –फूलने का वर्णन रोम के इतिहासकार ने किया जिसे रोम की धन –संपदा का भारत में जाने का दुख था। भारतीयों ने विदेशी लोगों से अनेक नई चीजें सीखी ,उदहारणर्थ – ग्रीष और रोम से स्वर्ण सिक्कों की ढ़लाई ,चीन से रेशम बानने की कला और इण्डोनेशिया से पान को उगाना सीखा। उन्होने विदेशियों व्यापार संबंध स्थापित किये । विभिन्न देशों की कला और संस्कृति का भारतीय संस्कृति पर भी प्रभाव पड़ा लेकिन दूसरे देशों मं भी इसका प्रतिबिम्ब देखने को मिला।

भारत हड़प्पा –शभ्यात के समय से ही अपने एशियाई पड़ोसियों से सम्पर्क बनाए रखा। भारतीय व्यापारी लोग मेसोपेाटामिया नगरों तक पहुंचे जहां ईसा –पूर्व 2400 से ईसा पूर्व 1700 के बीच उन व्यापारियों की सीलें पाई गई है। ईसवी सन् के आरभ में भारत ने चीन ,दक्षिण – पुर्व एशिया पश्चिम एशिया और रौमन साम्रज्य के साथ वाणिज्य सर्म्पक बनाए रखे। भारतीय स्थल मार्ग चीन रेशम – मार्ग से जुडे हुऐ थे। पूवी रोमन साम्रज्य के वाणिज्य सम्बन्धों का भी उल्लेख

मिलता है। इसकी अतिरिक्त, भारत ने पडोसी देशों में धर्मप्रचारक, विजेता और व्यापारी भेजे, जिन्होंने वहाँ वस्तियाँ वनाई। दक्षिण–पूर्वी एशिया या 'सुवर्ण भूमि' का एक अंग ब्रह्मा या वर्मा था, जहाँ भारीया संस्कृति का प्रवेश प्राचीनकाल में ही हो चुका था । ईसवी सन् के आरभ होने से पहले ही वर्मा के साथ भारत के सम्पर्क में वृद्धि हुई। कलिंग प्रदेश से व्यापारियों की बड़ी संख्या वहाँ व्यापार करने के लिए जाती रहती थी। सम्राट ने वौद्ध धर्म के प्रचारक मण्डल को वहाँ भेजा तथा बौद्ध धर्म का प्रचार कराया। 450 ई. में श्रीलंका से आचार्य बुद्धघोष ने वहाँ जाकर हीनयान मत की स्थापना की ।वर्मा में विष्णू की मूर्ति प्राप्त हुई है, जिससे सिद्ध होता है कि उस देश में हिन्दू धर्म का प्रचार हुआ था। वहाँ गुप्त युग के हिन्दु व वौद्ध अवशोंषों की पेगू प्रोम आदि विभिन्न स्थानों में प्राप्ति हुई है। बर्मा के शासकों में ग्यारहवीं शताब्दी के शासक अनिद्ध का नाम सर्वाधिक प्रसिद्ध है; जो बौद्ध मतानुयायी था तथा जिसने अनके पैागोडा एवं मठों का निर्माण करवाया ।

बौद्ध धर्म के प्रचार से श्रीलंका , वर्मा और मध्य एशिया के साथ भारत के सम्पर्क बढ़े । अध्कि सम्भव है कि ईसा पूर्व तीसरी सदी मे अशान काल में बौद्ध धर्मप्रचारक श्रीलंका भेजे गए कनष्कि के शासन काल से ही कई भारतीय धर्मप्रचारक भीन, मध्य, एशिया और अफगानिस्तान जा जाकर बौद्ध धर्म का उपदेशा देते चीने से बौद्ध धर्म कोरिया और जापना पहुँचा। फाहियान और ह्वेन–सांग जैसे कई चीनी यात्रा बौद्ध धर्मग्रंथों और सिद्धातों की खोज में ही भारत आए । अन्ततः यह सम्सर्क दोनों देशों के लिए लाभप्रद हुआ । बौद्धों की एक बस्ती तुन–हुआड में बस गई, जहां से मरूभूमि के उस पार जाने वाली वाणियों को टोलियों अपनी यात्रा शुरू करती थी भारतीयों ने रेशम उपजाने का कौशल चीन से सीखा और चीनियों ने बौद्ध चित्रकला भारत से सीखी से। प्राचीन काल में बौद्ध धर्म के दो और महान् केन्द्र थे – अफगानिस्तान और मध्य एशिया अफगानिस्तान में वुद्ध बहुत सी मतियाँ और कई विहार मिलें है।रूप के मध्य एशियाई क्षेत्रों में कई स्थानों पर उल्खननों के फलस्वरूप कई वौद्ध विहार ,स्तूप और अभिलेख प्रकार में आए है और भारतीय भाषाओं में लिखी पांडुलिपियाँ मित्नी है।

ईसा पूर्व दूसरी शाताव्दी से भारत ने चीन, मध्य एशिया, पश्चिम ऐशिय और रोमन साम्राज्य के साथ व्यापारिक सम्बन्ध वनाए थे । मध्य एशिया तिब्बत, भारत अफगानिस्तान,चीन रूप और मंगोलिया से घिरा हुआ क्षेत्र है। चीन से आने – जाने वाले व्यापारियों को बहुत कठिनाइयों के बावजूद इस क्षेत्र से होकार जाना पढता था मर्ग उन्होने बनाया वह आगे चकलर 'रेशम –मार्ग' (सिल्क रूट) के नाम से प्रसिद्ध हुआ । इसे इस नाम से इसीलिए वुलाया जाने लगा क्योंकि चीन से रेशम का व्यापार किया जाता था। रेशम मार्ग चीन से मध्य एशिया से हो कर दिक्षण एशिया, यूरोप तथा उत्तरी अफ्रीका तक जाने वाला थल व्यापार रास्ता था बड़ी मात्रा में चीने के रेशम और वस्त्र इसी मार्ग से पश्चिम तक पहुंचयाये जाने के कारण इस मार्ग का नाम रेशम मार्ग रखा गया। पुरातत्वीय खोज से पता चला है कि रेशम मार्ग ईसा पूर्व पहली शताब्दी के चीन के हान राजवंश के समय संपन्न हुआ था , उस समय रेशम मार्ग आज के अफगानिस्तान, उज्जबेकिस्तान, ईरान और मिश्र के अल्जेंडर नगर तक पहुंचता था और इस का एक दूसरा रास्ता पाकिस्तान तथा अफगानिस्तान के काबुल से हो कर फारसी खाड़ी तक पहुचता था, जो दक्षिण की दिशा में आज के कराची तक पहुंत जाता था और फिर समुद्री मार्ग से फारसी खड़ी और रोम तक पहुच जाता था ईसापूर्वक दूसरी शताब्दी से ले कर ईस्वी दूसरी शताब्दी तक रेशम मार्ग के किनारे – किनारे पूर्व से पश्चिम तक चार बड़े सम्राज स्थित थे, वे थे पूर्वी एशिया में चीन चीन का हान राजवंश , मध्य एशिया व भारत के उत्तरी भाग पर शासन करने वाल कुशान , पश्चिमी एंशिया का पार्शिया, जो प्राचनी इरान का दस व्यवस्था वाला राज्य या, एवं यूरोप का रोम सम्राज थें। रेशम मार्ग स इन प्राचीन सभ्यता वाले राज्यों में प्रत्यक्ष आवादाही सुलभ हुई थी और एक दूसरे से प्रभावित भी हुआ था

रेशम मार्ग और उस के शखा रास्तों के जरिए पूर्व और पश्चिम के बीच आवाजाही बहुत व्यस्त हुआ करती थी। आगे चलकर चीन आने जाने वाले विद्वानों ,भिक्षुओं , आचार्यो और

धर्माचार्यो आदि ने इसी मार्ग का प्रयोग किया। इस मार्ग ने उस समय के परिचिय विश्व में संस्कृतियों के प्रचार – प्रसार में एक महान श्रृखला का कार्य किया । किया । भारतीय संस्कृति का प्रभाव मध्य एशिया में भी दृढ़ता से अनुभव किया गया भारतीय सौदागरों का जहाज मलय होकर ही चीन एंव अन्य पर्वी देश जया करता था भारतीय सौदागरों पहले वही उतरते फिर वहीं से स्याम , कम्वुज आदि की यात्राएं होती थी मलय में क्रमशः अनेक हिन्दु राज्य स्थापित हो गये। स्याम नाम भारतीयों का दिया हुआ राज्य स्थापति हो गये। स्याम नाम भारतीयों का दिया हुआ नाम है जिंस आज थाइलैंड काह जाता है। वहां भारतीय संस्कृति विस्तारपूर्वेक व्यवहार में आने लगी थी और भारतीयों ने उनके संस्कृति का अपने में समन्वय कर वहां वसने लगे । हिन्दु राजकुल का राजा वहां वर्षों तक राज करता रहा । कम्बुज, कम्बोडिया को चीनी फु–ना कहते थे। ईसा की पहल सदी में कौण्डिण्य नाम का भारतीय व्रह्राण ने पहली वार के असभ्य लोगों को सभ्यता और संस्कृति का पाठ पढ़ाया । आज जिसे वियतनाम कहतें है उसका प्राचीन और भारतीय नाम चम्पा है। पहले चम्पा पर चीनियों का प्रभुत्व था जिसे भारतीयों ने रिस्तर कर दिया । चम्पा में भारती कला से प्रभावित शिल्पकृतियों की कमी नहीं। भारतीय संस्कृति एवं धर्म को माननेवलों लोग जावा में जाकर बसने लगे। यह प्रक्रिया ईसा की प्रारम्भिक शताब्यिों से प्रारम्भ हुई। चौथी , पांचवी सदी से हिन्दु राजकुलों का विस्तार वहाँ हो चुका था वहाँ के प्राचीन हिन्दु राजकुलों का उल्लेख संस्कृति में अंकित किये गये। जावा की कला प्राचीन भारतीय कला की भांति है। प्रायः समूचे दक्षिण – पूर्व द्वीप समूह का नाम सुवर्णद्वीप था । इसमें जावा और सुमात्रा प्रधान थे। सुमात्रा का भारतीय करण अत्यन्यत प्राचीन काल से प्रारम्भ हो चुका था । 690 ई. में ईत्सिंग ने सुमात्रा की यात्रा की । वह लिखा कि दक्षिण सागर के द्वीपों में सुमात्रा वौद्ध ज्ञान और अध्ययन का केन्द्र बन गया था और वहाँ के राज का जहारी बेड़ा भारत से व्यापार करता था बाली में समूचे द्वीप समूह में भारतय संस्कृति चिरस्थायी रही । ब्रहादेश या वर्मा , संभवतः भ्रम्म जाति के नाम पर भ्रम्म अथवा भ्रम्मा कहलाता था जिसके नाम पीछे भारतीयों ने संस्कृति में ब्रह्रा या व्रह्रादेश रख दिया। वर्मा। से भारत का संबंध मौर्यकाल में ही स्थ्ल और जल दोनों मार्गो से स्थापित हो चुका था। वर्मा में कई बार भारतीय मूल के व्यक्ति शासक बने। भारतीय बौद्धों और वैष्णवों की बड़ी संख्या वर्मा के निवासी बन चुके थे वर्मा इतिहासा के अनुसार भारत कके बोध –गया के मंदिर का पुनर्निर्माण भाारतीय रानी से उत्पन्न पुत्र श्री त्रिभुवनादित्य –धर्मराज द्वारा करवाया गयाा था । भारतीयय कला ने किस गहरी मात्रा में वर्मा की कला को प्रभावति किया यह वहां के मंदिरों स्तूपों और मूर्तियों से प्रकट है।

निष्कर्ष

यह समझना गलत होगा कि भारतीय संस्कृति के प्रसार का श्रेय केवल धर्म हैं। धर्मप्रचारकों कि पीछे –पीछे व्यापारी और विजयाकांक्षी भी जाते रहे और उन्होनें मध्य एशिया और दक्षिण पूर्व एशिया के सथा भारत के संबंधों को मजबूत बनाने मे प्रमुख भूमिका निभाई । विदेशों में भारतीय संस्कृति के प्रसार में व्यापार एक महत्त्वपूर्ण माध्यम रहा । प्राचीन समय से ही हमारे भारतीये जहाज विशाल सागर को पार कर विदेशी तटों पर पहुंचा। उन्होंने वहां बहुत से देशों के साथ व्यापारिक संबंध बनाये । पडोसी देशों के साहित्य, कला और शिल्प पर भारतीय संस्कृति और सभ्यता की छाप साफ –साफ दिखायी देती है। यहां तक कि सुदुर अमरीकी तटों सूरीनाम और कैरेवियन द्वीपों पर भी भारतीय संस्कृति के स्मृति चिह्न मिलते है। व्यापार से वस्तुओं का विनियम हुआ ही , साथ –साथ सांस्कृतिक तत्वों का भी विनियम हुआ । यह मानना गलत होग कि केवल भारतीयों ने ही अपने पड़ोसियों के सासंस्कृतिक विकास में योगदान किया। यह दो–तरफा प्रक्रिया थी।भारतीयों ने अपने दूर और पास के पड़ोसियों से भौतिक संस्कृति के कई उपादेय तत्व लियें भी। उन्होंने यूनानियों और रोमनों से सोने का सिक्का ढ़ालना सीखा, चीनियों से रेशम उत्पादन करना सीखा , इंडोनेशिया से पान की बेल लगाना सीखा , और कई अन्यान्य चीजे भी अपने पड़ीसी देशों से सीखीं। ऐसा प्रतीत होता है कि कला, धर्म, लिपि और भाषा के क्षेत्र में भारत का योगदान अधिक महत्त्पूर्ण रहा।

संदर्भ

1. उपाध्याय, डॉ भागवतशरण, वृहतर भारत , दिल्ली, 1981
2. चन्द्र मोती, प्राचीन भारतीय वेश–भूषा, प्रयाग, सं. 2007
3. रैपसन, इ.जे., कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया, कैम्ब्रिज, 1935
4. सिंह,मदन मोहन , लाइफ इन नो ईस्ट इंडिया इन प्री– मोर्यन टाइम्स, दिल्ली , 1967
5. जेरा . आए.ए फॉरेन इन्फ्लुमेन्यस इन ऍशियेंट इण्डया, वम्बई, 1963
6. मोहन एम. वी. डी., द नो. ईस्ट इंडिया इन ऑफ द सेकन्ड सेन्चुरी वी. सी लुधियाना , 1974
7. राधकृष्णन एस. इंडियन किलॉप्पी , लंदन ,1927
8. त्रिपाठी आर. एस., हिस्ट्री ऑफ ऐंशियेंट इंडिया , दिल्ली , 1960
9. अंगरकर डी. आर. सम आस्प्पेक्ट्स ऑफ ऐंशियेंट हिन्दु पॉलिटी ,बनारस , 1923
10. शरण परामात्ता, प्राचीन भारत में राजनीतिक विचार एवं संस्थाएँ दिल्ली 2000
11. वागची पी. सी इण्डिया एंव सेन्ट्रल एशिया, कलकत्ता 1944
12. वेलेनित्सकी ए., पेंर्टिस ऑफ सेन्ट्र एशिया, लंदन , 1967
13. वुसगली एम. पैंटिग्स ऑफ सेन्ट्रल एशिया , जेनेवा, 1963